नवबिहार टाइम्स
बोकारो, मंगलवार 04 नवंबर 2025

संपादकीय

सबको चुभेगा ये बैन

अलास्का में रूसी राष्ट्रपति पुतिन और अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप की मुलाकात की उम्मीदें अब पुरानी लगने लगी हैं। अगस्त की वह तस्वीर, जिसमें दोनों नेता एक ही कार में थे, अब यूक्रेन युद्ध पर बातचीत शुरू होने की उम्मीद जगाती थी। लेकिन, रूस की दो बड़ी तेल कंपनियों, ञ्जशह्यठ्ठद्गद्घह्ल और ह्लह्वद्मश्चद्बद्य पर अमेरिकी प्रतिबंधों ने इस उम्मीद को खत्म कर दिया है। इस अमेरिकी फैसले का असर भारत सहित पूरी दुनिया को भुगतना पड़ेगा।ट्रंप बुडापेस्ट में पुतिन से मिलने वाले थे, लेकिन बाद में उन्होंने कहा कि वह ऐसी बैठक नहीं करना चाहते जो बेकार साबित हो। इसके ठीक अगले दिन, रूसी कंपनियों पर प्रतिबंध लगा दिया गया। ट्रंप सरकार का मानना है कि रूस युद्ध में अपने तेल व्यापार के दम पर टिका हुआ है। इसलिए, यह कदम रूस पर दबाव बनाने के लिए उठाया गया है।पहले भी अमेरिका रूसी तेल पर आपत्ति जताता रहा है, लेकिन भारत और चीन के ज़रिए इसके व्यापार की छूट देता रहा था। अमेरिकी सहमति के कारण ही दुनिया में तेल की सप्लाई पहले की तरह जारी थी। लेकिन अब नए प्रतिबंध सीधे कंपनियों पर लगाए गए हैं। इसका मतलब है कि इन कंपनियों के साथ किसी भी तरह का व्यापार करना बहुत मुश्किल हो जाएगा।रूस ग्लोबल ऑयल प्रोडक्शन का 11 प्रतिशतखता है, और ये दोनों कंपनियां इसमें से लगभग आधा उत्पादन करती हैं। इन पर बैन लगने से कच्चे तेल की ग्लोबल सप्लाई घट सकती है। हालांकि ओपेक देशों ने अमेरिका के कहने पर पहले ही उत्पादन बढ़ा दिया है, लेकिन रूस के सस्ते तेल की कमी को पूरा करना आसान नहीं होगा।अमेरिकी प्रतिबंधों का असर भारत पर भी पड़ेगा। रिलायंस इंडस्ट्रीज और अन्य सरकारी व निजी तेल रिफाइनरी कंपनियां रूसी तेल पर बहुत ज़्यादा निर्भर हैं। रिलायंस तो रोशनोफिट की सबसे बड़ी भारतीय खरीदार है। भारतीय कंपनियों ने रूस से तेल खरीदना कम करने की तैयारी शुरू कर दी है।अमेरिकी बैन के बाद ब्रेंट क्रूड के दाम में 5 प्रतिशत आया है। 21 नवंबर से जब ये प्रतिबंध पूरी तरह लागू हो जाएंगे, तो क्रूड ऑयल की कीमतों में और तेज़ी आ सकती है। यह भारत जैसे देशों के लिए चिंता की बात है, क्योंकि भारत अपनी 85 प्रतिशत तेल ज़रूरतें आयात से पूरी करता है।यह स्थिति भारत के लिए एक बड़ी चुनौती पेश करती है। भारत को अपनी ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए वैकल्पिक स्रोतों की तलाश करनी होगी। रूसी तेल पर निर्भरता कम करने के लिए सरकार और कंपनियों को मिलकर काम करना होगा। यह देखना होगा कि भारत इस मुश्किल दौर से कैसे निपटता है।यह प्रतिबंध सिर्फ़ रूस पर ही नहीं, बल्कि उन देशों पर भी असर डालेगा जो रूस से तेल खरीदते हैं। तेल की बढ़ती कीमतें आम आदमी की जेब पर भारी पड़ेंगी। पेट्रोल-डीजल के दाम बढ़ेंगे, जिससे महंगाई और बढ़ेगी। सरकार को इस स्थिति से निपटने के लिए ठोस कदम उठाने होंगे। यह देखना दिलचस्प होगा कि क्या अमेरिका अपने प्रतिबंधों पर कायम रहता है या फिर बातचीत के ज़रिए कोई समाधान निकलता है।

एक नवंबर के दिन छत्तीसगढ़ की उम्र चौथाई सदी पूरी कर चुकी है। इस राज्य के जन्म के लिए धरनारत रहे उस व्यक्ति का नाम लोग भूल चुके हैं। राजनेताओं की लंबी फेहरिस्त राजनीतिक क्षितिज पर अपनी अच्छी-बुरी उपलब्धियों के साथ चमक रही है। लेकिन दाऊ आनंद अग्रवाल का संघर्ष कहीं खो गया है।इक्कीसवीं सदी की आहट सुनाई देने लगी थी..उन दिनों इन पंक्तियों का लेखक मध्य प्रदेश-राजस्थान के एक बड़े अखबार का दिल्ली में संवाददाता था..उस दिन खबरों का सूखा था..उसे दूर करने की नीयत से इन पंक्तियों का लेखक धरनों के लिए विख्यात जंतर-मंतर पर जा पहुंचा...वहां जाकर देखा, मध्य प्रदेश से अलग करके छत्तीसगढ़ राज्य बनाने की मांग को लेकर साधारण-सा व्यक्ति धरने पर बैठा था..साथ में गिनती के विश्वासपात्र ही बैठे थे..पता चला कि धरनारत उस व्यक्ति के पास खाने तक के पैसे नहीं थे..उनसे पता चली कि रात को रोजाना अपनी क्षुधा शांत करने के लिए पास ही स्थित गुरूद्वारा बंगला साहिब या फिर रकाब जाते और वहां के लंगर से अपनी भूख शांत करते थे..उनके साथियों का भी यही हाल था..वनोपज और प्राकृतिक संसाधनों से युक्त राज्य का धरना और उसे सहारा लंगर का..मर्म को छूने वाली वह खबर थी..खबर लिखी भी, 'लंगर के सहारे चलता अलग राज्य का धरना'. खबर छपते ही रायपुर और उसके आस-पास हलचल मच गई। तब आज की तरह फोन नहीं थे..लेकिन लोग उस धरना देने वाले व्यक्ति का पता पूछने और उन तक अपनी श्रद्धा रकम पहुंचाने की जैसे होड़ लग गई।

चौथाई सदी में कितना बदला धान का कटोरा

(उमेश चतुर्वेदी)

एक नवंबर के दिन छत्तीसगढ़ की उम्र चौथाई सदी पूरी कर चुकी है। इस राज्य के जन्म के लिए धरनारत रहे उस व्यक्ति का नाम लोग भूल चुके हैं। राजनेताओं की लंबी फेहरिस्त राजनीतिक क्षितिज पर अपनी अच्छी-बुरी उपलब्धियों के साथ चमक रही है। लेकिन दाऊ आनंद अग्रवाल का संघर्ष कहीं खो गया है। पता नहीं छत्तीसगढ़ के लोगों, विशेषकर प्रबुद्ध लोगों को उनका नाम याद है भी या नहीं। उन दिनों छत्तीसगढ़ के एक प्रमुख दैनिक के दिल्ली ब्यूरो प्रमुख रहे विनोद वर्मा बताते हैं कि दाऊ के एक वक्त का भोजन अखबारों के प्रमुख दफ्तर आईएनएस बिल्डिंग की कैंटीन में होता था..जिसका खर्च विनोद वर्मा उठाते थे। यहां बता दें कि विनोद वर्मा बाद के दिनों में छत्तीसगढ़ के कांग्रेसी मुख्यमंत्री भूपेश बघेल के राजनीतिक सलाहकार रहे।

आनंद अग्रवाल को ही क्यों, बहुत लोगों को पवन दीवान की भी याद नहीं होगी। पवन दीवान बुनियादी रूप से समाजवादी नेता थे। यह बात और है कि उन्होंने बाद में राजनीतिक दलों में खूब आवाजाही की। कभी बीजेपी के कमलधारक बने तो कभी कांग्रेस के हाथ का साथ लिया। लेकिन छत्तीसगढ़ को अलग राज्य बनाने के लिए बड़ा आंदोलन उन्होंने किया था। दिल्ली के जंतर-मंतर पर उन्होंने बड़ा प्रदर्शन भी किया था। छत्तीसगढ़ अब अलग राज्य के रूप में फल-फूल रहा है। लेकिन उसे मध्य प्रदेश से अलग राज्य बनाने की पहली बार ठोस मांग करने वाले खूबचंद बघेल के नाम को कितने लोग याद करते हैं, पता नहीं। पिछली सदी के साठ के दशक के आखिरी वर्षों में उन्होंने छत्तीसगढ़ भ्रातृ संघ बनाया था और अलग राज्य की उन्होंने मांग को पहली बार ताकतवर सुर दिया था। जिन्होंने भी छत्तीसगढ़ को अलग राज्य बनाने की मांग रखी, उनकी मांग का आधार था छत्तीसगढ़ के प्राकृतिक संसाधन, वनोपज और खूबसूरत नजारे। सबका मानना था कि अपने प्राकृतिक सौंदर्य, वनोपज और खनिजों की वजह से छत्तीसगढ़ कहीं ज्यादा समृद्ध है, लेकिन उसका फायदा उसके निवासियों को नहीं मिल रहा है। उस पर कब्जा राज्य के दूसरे इलाके के लोगों और राजनीतिक वर्चस्व वाली ताकतों को मिल रहा है। वैसे छत्तीसगढ़ को अलग राज्य बनाने की मांग 1924 में रायपुर में हुई थी। लेकिन तब देश गुलाम था, अंग्रेजी दासतां से मुक्ति तब पहला उद्देश्य था। लिहाजा यह मांग सिरे से परवान नहीं चढ़ पाई।

दिलचस्प यह है कि जिन्होंने अलग राज्य की मांग रखी, राजनीतिक रूप से उनका आज कोई अस्तित्व ही नहीं है। इसे बिडंबना कहें कि कुछ और, यह स्थिति छत्तीसगढ़ के साथ बने उत्तराखंड राज्य की भी है। उत्तराखंड को उत्तर प्रदेश से अलग राज्य बनाने की मांग को लेकर सबसे जोरदार आंदोलन उत्तराखंड क्रांति दल ने चलाया, उसकी कीमत भी चुकाई। मुजफ्फरनगर कांड उस कीमत की चरम परिणति कही जा सकती है। लेकिन उत्तराखंड में आज उत्तराखंड क्रांति दल हाशिए पर है।

छत्तीसगढ़ से जुड़ा एक और वाकया याद आ रहा है। छत्तीसगढ़ में पहली बार विधानसभा चुनाव 2003 में हो रहा था। उसकी तैयारी भारतीय जनता पार्टी ने एक साल पहले ही शुरू कर दी थी। उन दिनों केंद्र में अटल बिहारी वाजपेयी की अगुआई में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की सरकार थी। उस सरकार में रमन सिंह इस्पात राज्य मंत्री थे। बीजेपी ने तय किया कि उन्हें चुनावी तैयारी के लिए छत्तीसगढ़ भेजा जाए। रमन सिंह छत्तीसगढ़ जाना नहीं चाहते थे। दिल्ली के ललित होटल के एक कार्यक्रम में दबी जुबान से बीजेपी के इस फैसले का विरोध भी जताया था। शायद उन्हें अपने भावी किस्मत का पता नहीं था। भारी मन से वे छत्तीसगढ़ गए, लेकिन विधानसभा चुनावों में उनकी अगुआई में भारी जीत मिली। मुख्यमंत्री बने और लगातार तीन कार्यकाल तक मुख्यमंत्री रहने का उन्हें स्वर्णिम मौका मिला।

छत्तीसगढ़ ने तब से लेकर अब तक लंबी यात्रा कर ली है। छत्तीसगढ़ की पच्चीस साल की इस यात्रा में सत्रह साल तक बीजेपी का शासन रहा है, जबकि महज आठ साल कांग्रेस की सरकार रही। छत्तीसगढ़ जब अलग हुआ था तो उसका बजट महज पांच हजार सात सौ करोड़ का था। आज राज्य का बजट एक लाख 65 हजार सौ करोड़ तक पहुंच गया है। राज्य की मौजूदा विष्णुदेव साय सरकार इसे गति यानी सुशासन, त्वरित अवसंरचना, प्रौद्योगिकी और औद्योगिक विकास की थीम पर आधारित बजट बता रही है। छत्तीसगढ़ राज्य जब बना तो वहां सिर्फ एक मेडिकल कॉलेज था, वहां एकमात्र मेडिकल कॉलेज पंडित जवाहरलाल नेहरू मेमोरियल मेडिकल कॉलेज, रायपुर था। यह कॉलेज 1963 में स्थापित किया गया था और इसे रायपुर मेडिकल कॉलेज के नाम से भी जाना जाता है। लेकिन छत्तीसगढ़ में आज 14 मेडिकल कॉलेज हैं, जिनमें 11 सरकारी, एक एम्स और 3 निजी कॉलेज शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, राज्य में 4 नए सरकारी मेडिकल कॉलेजों के निर्माण की घोषणा की जा चुकी है। ये कॉलेज बन गए तो उनकी संख्या 18 हो जाएगी। कह सकते हैं कि राज्य ने मेडिकल के क्षेत्र में बड़ी छलांग लगा ली है।

छत्तीसगढ़ को लेकर एक छवि यह है कि वह छोटा राज्य है। लेकिन हकीकत ऐसा नहीं है। उसे छोटा मानने की वजह उसकी अपेक्षाकृत कम जनसंख्या है। साल 2011 की जनगणना के अनुसार, राज्य की जनसंख्या दो करोड़ 55 लाख से ज्यादा है। अनुमान है कि इन दिनों राज्य की जनसंख्या तीन करोड़ आठ लाख के करीब है। आम धारणा है कि छत्तीसगढ़ बिहार से भी छोटा है। बिहार की जनसंख्या करीब तेरह करोड़ से कुछ ज्यादा है। लेकिन हकीकत यह है कि छत्तीसगढ़ रकबा के लिहाज से बिहार से डेढ़ गुना बड़ा राज्य है। छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री के सलाहकार पंकज झा कहते हैं कि छोटा राज्य होने की छवि के चलते छत्तीसगढ़ को भारतीय राजनीति का ज्यादातर हिस्सा उसे कमतर आंकता है। इस छवि को तोड़ना उनकी सरकार की प्राथमिकता है।

जब छत्तीसगढ़ बना था, तब उसके हिस्से मध्य प्रदेश के 16 जिले आए थे। लेकिन आज छत्तीसगढ़ में 33 जिले हैं। खूबसूरत झरने, प्राकृतिक जंगलों और खूबसूरत पहाड़ों के प्रदेश छत्तीसगढ़ में कोयला, लोहा और टिन का प्रचुर खनिज भंडार है। देश का तीसरा सबसे बड़ा वनाच्छादित राज्य छत्तीसगढ़ है, जिसका कुल 44.24 प्रतिशत हिस्सा जंगलों से ढंका पड़ा है। जाहिर है कि इनकी वजह से जहां पर्यावरण की रक्षा हो रही है, वहीं जंगल पर आधारित जनजातियों के जीवन स्तर को बेहतर बनाया जा रहा है। छत्तीसगढ़ एक नए राज्य के रूप में अपनी स्थापना के बाद से, शिक्षा, स्वास्थ्य, बुनियादी ढांचे और अर्थव्यवस्था जैसे कई क्षेत्रों में महत्वपूर्ण बदलाव से गुजरा है। राज्य की प्रति व्यक्ति आय में लगभग 10 गुना वृद्धि हुई है, राज्य की जीडीपी 21,000 करोड़ डॉलर से बढ़कर लगभग अब करीब 5 लाख करोड़ डॉलर की हो गई है। कभी यहां आने में बैंक हिचकते थे, लेकिन अब यहां बैंकों का जाल है। राजमार्ग और रेलवे का नेटवर्क भी राज्य में बहुत बढ़ा है। मध्य प्रदेश से अलग होते वक्त राज्य में महज चार विश्वविद्यालय थे, जिनकी संख्या बढ़कर अब 25 हो चुकी है। पहले नक्सल प्रभावित इलाकों में स्कूलों की भारी कमी थी। लेकिन अब यहां नए स्कूल खोले गए हैं और पोटाकेबिन, आश्रम और छात्रावास जैसी पहल शुरू की गई हैं। बस्तर में सुपर स्पेशियलिटी अस्पताल का निर्माण किया गया है, हालाँकि यह अभी अधूरा है। नक्सलवाद के चलते यहां परिवहन ढांचा सुदृढ़ नहीं था। लेकिन अब उसमें भी बदलाव आया है। राज्य में राष्ट्रीय राजमार्गों और रेल लाइनों की लंबाई दोगुनी हो गई है। पहले राज्य की राजधानी रायपुर से सिर्फ छह उड़ानों की सुविधा थी, जो अब बढ़कर 76 हो गई है। बस्तर और सरगुजा में भी हवाई अड्डे बनाए गए हैं। जगदलपुर में साप्ताहिक आधार पर उड़ीसा और आंध्र प्रदेश के लिए विमान सेवाएं जारी हैं। राज्य की शुरूआत में जहां बैंक शाखाओं की संख्या 1500 थी, वह अब बढ़कर 6500 हो गई है। छत्तीसगढ़ को उसकी धान की उपज के लिए धान का कटोरा कहा जाता था। अलग राज्य बनने के बाद राज्य में जहां धान की खरीद 5 लाख मीट्रिक टन थी, वह अब बढ़कर 1.5 करोड़ मीट्रिक टन हो गई है। इसी तरह राज्य में बिजली उत्पादन 7300 मेगावाट से बढ़कर 18000 मेगावाट तक पहुंच गया है। राज्य के वनोपज में तेंदूपत्ता का प्रमुख स्थान है। सरकारी स्तर पर तेंदूपत्ता संग्रहण मूल्य को ?2500 से बढ़ाकर ?4000 प्रति मानक बोरा कर दिया गया है।

कभी लोहा, कोयला और धान के लिए विख्यात छत्तीसगढ़ अब ऊर्जा, गारमेंट, न्यू डेटा सेंटर और फार्मा के राज्य के रूप में भी उभर चुका है। निश्चित तौर पर इसके लिए राज्य की दोनों प्रमुख पार्टियों की सरकारों का योगदान रहा है। आज छत्तीसगढ़ महिला कल्याण, संस्कृति और किसान कल्याण योजनाओं ने भी राज्य की तसवीर बदलने में बड़ी भूमिका निभाई है। अलग राज्य बनने से पहले राज्य की सिंचाई क्षमता 13.28 लाख हेक्टेयर थी, वह अब बढ़कर 21.76 लाख हेक्टेयर पहुंच गई है।राज्य की सालाना कृषि विकास दर 7.8 प्रतिशत हो गई है। पिछले पच्चीस सालों में रायपुर, भिलाई, कोरबा और रायगढ़ राज्य के बड़े औद्योगिक इलाके के रूप में विकसित हुए हैं। कभी जहां बंदूकों की आवाज गूंजती थी, वहां अब विकास की नई इबारत लिखी जा रही है। राज्य में चहुंओर बदलाव दिख रहा है। अपेक्षाकृत सहज माने जाने वाला राज्य का बहुसंख्यक आदिवासी समुदाय भी मुख्यधारा में नजर आ रहा है। गुरूद्वारे के लंगर के सहारे जिस अलग राज्य की मांग राजधानी दिल्ली में परवान चढ़ी थी, वह राज्य अब नई कहानियां लिख रहा है। राजनीतिक तौर पर राजनीतिक नैरेटिव के हिसाब से सवाल हो सकते हैं। लेकिन उन सवालों के बावजूद एक तथ्य समान है, वह कि राज्य ने चौथाई सदी में बहुत कुछ हासिल किया है। इसका यह मतलब नहीं कि और कुछ हासिल किया जाना बाकी नहीं है। राज्य के पास जैसी संपदा है, जिस तरह के प्राकृतिक स्थल हैं, उनकी वजह से वहां विकास की अनंत संभावनाएं हैं। पर्यटन की दिशा में अब भी बहुत कुछ किए जाने की जरूरत है। केरल से कम सुंदर नहीं है छत्तीसगढ़। उस प्राकृतिक सौंदर्य के सैलानी नजरिये से दोहन की काफी गुंजाइश है। उम्मीद की जानी चाहिए कि राज्य इस दिशा में जरूर आगे बढ़ेगा। लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं स्तम्भकार हैं। (इस लेख में लेखक के अपने विचार हैं।)

आस्था को राजनीति की सीढ़ी बना रहे जेडी वेंस ने पत्नी उषा समेत पूरे हिंदू समुदाय का अपमान किया

(नीरज कुमार दुबे)

कुछ साल पहले तक यही जेडी वेंस अपनी पत्नी की आस्था की सराहना करते थे। वह कहते थे कि उषा ने उन्हें ईश्वर और प्रार्थना की ओर लौटने की प्रेरणा दी। उनकी किताब ॥द्बद्यद्यड्डद्बद्यद्य4 श्वद्यद्गद्द4 में भी उषा की भूमिका को उनकी आध्यात्मिक यात्रा का केंद्र बताया गया था।

अमेरिका के उपराष्ट्रपति जेडी वेंस की टिप्पणी ने एक बार फिर दिखा दिया है कि जब धर्म राजनीति का औज़ार बन जाता है, तो सबसे पहले सम्मान और संवेदनशीलता की बलि चढ़ती है। मिसिसिपी में हुए टर्निंग पाइंट यूएसए कार्यक्रम में वेंस ने कहा कि उनकी पत्नी उषा वेंस, जो जन्म से हिंदू हैं, 'धार्मिक नहीं थीं' और वह उम्मीद करते हैं कि 'एक दिन वह भी ईसा मसीह में विश्वास करेंगी।' यह सुनते ही दुनियाभर के हिंदू समुदाय में नाराज़गी फैल गई।

कुछ साल पहले तक यही जेडी वेंस अपनी पत्नी की आस्था की सराहना करते थे। वह कहते थे कि उषा ने उन्हें ईश्वर और प्रार्थना की ओर लौटने की प्रेरणा दी। उनकी किताब ॥द्बद्यद्यड्डद्बद्यद्य4 श्वद्यद्गद्द4 में भी उषा की भूमिका को उनकी आध्यात्मिक यात्रा का केंद्र बताया गया था। पर अब वही व्यक्ति अपनी पत्नी के धर्म को 'अधूरा' बताने लगे हैं क्योंकि आज वह राजनीति के ऐसे दौर में हैं, जहाँ धर्म सिर्फ़ आस्था नहीं, बल्कि चुनावी हथियार बन चुका है।

हम आपको बता दें कि 2014 में जब जेडी और उषा वेंस का विवाह हुआ था, तब वह आधुनिक अमेरिका में सांस्कृतिक और धार्मिक सहअस्तित्व की मिसाल माना गया। शादी में वैदिक मंत्र भी थे और चर्च के गीत भी। वेंस उस समय गर्व से कहते थे कि उनकी पत्नी के हिंदू संस्कारों ने उन्हें विनम्रता और ईश्वर के करीब रहना सिखाया। लेकिन अब, जब वह ट्रम्प समर्थक कट्टर दक्षिणपंथी राजनीति के केंद्र में हैं, तो वही उषा की आस्था कमज़ोरी के रूप में दिखाई जाने लगी है। यह बदलाव सिर्फ़ व्यक्तिगत नहीं, बल्कि उस राजनीतिक दबाव का नतीजा है जहाँ हर नेता से उम्मीद की जाती है कि वह ईसाई पहचान को खुलकर प्रदर्शित करे।

दूसरी ओर, अमेरिका और भारत, दोनों जगह के हिंदू संगठनों ने वेंस के बयान को 'धार्मिक अहंकार' बताया है। हिन्दू अमेरिकन फाउंडेशन (एचएएफ) ने सीधा सवाल पूछा है कि जब वेंस अपनी पत्नी की आस्था से प्रेरित होकर खुद ईश्वर में लौटे, तो अब वह हिंदू धर्म को कमतर क्यों दिखा रहे हैं? संस्था ने यह भी याद दिलाया कि हिंदू धर्म में किसी को अपने धर्म में 'लाने' की कोई आवश्यकता नहीं मानी जाती। हिंदू दर्शन बहुलता और सह-अस्तित्व पर टिका है– यह मानता है कि सत्य एक है, परंतु उसे पाने के कई मार्ग हैं। इसके विपरीत, वेंस का कहना है कि वह उम्मीद करते हैं कि उनकी पत्नी 'कभी ईसा को अपनाएँगी', इस विचारधारा के बिल्कुल खिलाफ़ है। देखा जाये तो असल समस्या यह नहीं कि वेंस ईसाई हैं; समस्या यह है कि उन्होंने अपनी पत्नी के विश्वास को कमतर दिखाकर अपनी धार्मिक श्रेष्ठता साबित करने की कोशिश की। यही बात हिंदू समुदाय के लिए अपमानजनक है।

वैसे जेडी वेंस का यह बयान अमेरिकी राजनीति के एक बड़े बदलाव का संकेत है, जहाँ आस्था अब निजी नहीं रही, बल्कि सार्वजनिक प्रदर्शन का विषय बन गई है। एमएजीए (मैक अमेरिकन ग्रेट अगेन) आंदोलन के भीतर अब धर्म केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि पहचान और वोट का प्रतीक बन चुका है। वेंस का यह कहना कि ईसाई होना मतलब दूसरों के साथ अपने विश्वास को साझा करना इस मानसिकता को दिखाता है, जिसमें साझा करना दरअसल मनवाना बन गया है। ऐसी सोच में धार्मिक स्वतंत्रता की जगह धार्मिक श्रेष्ठता ले लेती है। उषा वेंस अब तक सार्वजनिक रूप से बहुत कम बोलती हैं। लेकिन जो लोग उन्हें जानते हैं, वह कहते हैं कि वह एक शांत, दृढ़ और सहिष्णु व्यक्तित्व हैं। उन्होंने कभी अपने पति से यह नहीं कहा कि वह हिंदू बनें, न ही अपनी संस्कृति को छोड़ें। उनके जीवन में धर्म एक संतुलन और संवाद का माध्यम रहा है। इस पृष्ठभूमि में जेडी वेंस का बयान न केवल उनके प्रति अन्याय है, बल्कि उन लाखों अंतरधार्मिक परिवारों का भी अपमान है जो प्रेम और परस्पर सम्मान पर टिके हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि जब धर्म प्रचार बन जाए, तो प्रेम खो जाता है। जेडी वेंस की यह टिप्पणी यह दिखाती है कि राजनीतिक महत्वाकांक्षा कैसे व्यक्तिगत रिश्तों और धार्मिक संवेदनाओं को निगल जाती है। जो व्यक्ति कभी अपनी पत्नी के धर्म से प्रेरणा लेता था, आज उसी धर्म को अधूरा बताकर अपने वोटरों को खुश कर रहा है। यह घटना सिर्फ़ अमेरिका के लिए नहीं, बल्कि पूरी दुनिया के लिए एक चेतावनी है कि जब धर्म संवाद की जगह प्रचार का माध्यम बन जाता है, तो सत्य की जगह सत्ता ले लेती है।

मानसून की आपदाओं के बाद अब चरम सर्दियों का सायरन

(जयसिंह रावत)

मानसून की तबाही अभी ताजा है। इस साल भारी वर्षा, बाढ़ और भूस्खलन ने हिमालयी राज्यों में जो तबाही मचाई उसकी भरपाई में ही कई साल लगेंगे। लेकिन जैसे ही बादल छँटे, अब सर्दी का एक नया डरावना चेहरा सामने आने लगा है। भारतीय मौसम विभाग ने इस वर्ष सामान्य से अधिक कठोर सर्दी की संभावना जताई है।

ला नीना प्रभाव के कारण इस बार अत्यधिक ठंड, असामान्य शीतलहरें और भारी हिमपात की आशंका जताई गयी है। इसका सीधा असर हिमालयी राज्यों पर पड़ेगा, जहां हिमस्खलन की घटनाएं बढ़ सकती हैं।

यह केवल यात्रियों और पर्यटकों के लिए ही नहीं, बल्कि स्थानीय लोगों, सेना और निर्माण कार्यों के लिए भी गंभीर खतरा बन सकता है। सियाचिन सहित भारत तिब्बत सीमा स्थित सेना की चौकियों की चुनौतियों को ये सर्दियां काफी बढ़ा सकती है।

अब ला नीना के कोप का खतरा: दरअसल, ला नीना एक ऐसी जलवायु घटना है, जो प्रशांत महासागर के पूर्वी भाग में समुद्र की सतह के तापमान में गिरावट के कारण उत्पन्न होती है। यह एल नीनो का विपरीत रूप है। एल नीनो जहां भारत के मानसून को कमजोर बनाता है, वहीं ला नीना उसे प्रबल करता है, परंतु सर्दियों में ठंड को अत्यधिक बढ़ाता भी है।

अमेरिकी राष्ट्रीय महासागरीय एवं वायुमंडलीय प्रशासन (एनओएए) के अनुसार, 2025 के अंत तक ला नीना के विकसित होने की 71 प्रतिशत संभावना है, जो दिसंबर 2025 से फरवरी 2026 तक सक्रिय रह सकती है।

भारतीय मौसम विभाग के विशेषज्ञों का भी यही अनुमान है कि उत्तर भारत में तापमान सामान्य से दो से तीन डिग्री कम रहेगा, लंबी शीतलहरें चलेंगी और हिमालयी क्षेत्रों में बर्फबारी सामान्य से कहीं अधिक होगी।

हिमालयी राज्यों में एवलांच का डर: इसका अर्थ है कि पश्चिमी विक्षोभ अधिक सक्रिय रहेंगे, जिसके परिणामस्वरूप दिसंबर से अप्रैल तक हिमालयी ढलानों पर तीन से पाँच मीटर तक बर्फ जम सकती है। विशेषज्ञों का कहना है कि कमजोर ला नीना भी बर्फबारी में 20 से 30 प्रतिशत की वृद्धि कर सकता है, जिससे हिमस्खलन की संभावना दोगुनी हो जाती है।

जलवायु परिवर्तन ने इस जोखिम को और जटिल बना दिया है। गर्मियों की गर्मी से ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे हैं, जबकि सर्दियों में वर्षा के साथ बर्फ गिरने से हिमस्तर अस्थिर होता जा रहा है।

हिमस्खलन तब होता है जब किसी ढलान पर जमा बर्फ, हिमखंड या चट्टान अचानक खिसक पड़ती है। इसके मुख्य कारणों में अत्यधिक बर्फबारी, तापमान में तीव्र उतार-चढ़ाव, मानवजनित गतिविधियाँ जैसे सड़क निर्माण या विस्फोट, और जलवायु परिवर्तन से बढ़ती वर्षा शामिल हैं। चण्डीगढ़ स्थित स्नो एंड एवेलांच स्टडी एस्टैब्लिशमेंट (एसएएसई) के अनुसार, ला नीना के वर्षों में हिमालय में हिमस्खलन की घटनाएं सामान्य वर्षों की तुलना में 15 से 20 प्रतिशत अधिक होती हैं।

दिसंबर से मार्च का समय उत्तरमुखी 25 से 45 डिग्री ढलानों वाले क्षेत्रों में एवलांच का खतरा चरम पर माना जाता है।

सर्दियों की आपदाओं की भयानक यादें: पिछले वर्षों में हिमालय इन भयावह घटनाओं का साक्षी रहा है। फरवरी 2021 में उत्तराखंड के चमोली जिले की ऋषिगंगा घाटी में 27 मिलियन घनमीटर बर्फ और चट्टानों का स्खलन हुआ, जिसने मलबे की बाढ़ का रूप ले लिया। इस हादसे में दो सौ से अधिक लोग मारे गए और परियोजनाओं को हजारों करोड़ रुपये की क्षति हुई।

अक्टूबर 2022 में उत्तरकाशी में नेहरू पर्वतारोहण संस्थान के प्रशिक्षुओं पर हिमस्खलन टूटने से 27 ट्रैकर्स की मौत हुयी। फरवरी 2025 में चमोली के माणा गांव के निकट सीमा सड़क संगठन के शिविर पर बर्फ का पहाड़ टूट पड़ा, जिसमें 54 मजदूर दब गए।

आठ की मृत्यु हो गई और 46 को 36 घंटे के अभियान के बाद ड्रोन और हेलीकॉप्टर की मदद से बचाया गया। अप्रैल 2023 में सिक्किम की लाचेन घाटी में 16 पर्यटक मारे गए और 370 लोगों को बचाया गया। सियाचिन जहां भारत की सेना स्थाई रूप से तैनात है वहां ऐसी घटनायें आम हैं। दरअसल, ये घटनाएं केवल जानें ही नहीं लेता, बल्कि सड़कें, पुल, विद्युत आपूर्ति और जलस्रोतों को भी महीनों तक ठप कर देता है। वर्ष 2020 से 2025 के बीच 250 से अधिक लोगों की मृत्यु ऐसे हादसों में हुई है। पश्चिमी हिमालय में सर्वाधिक जोखिम

एवलांच हादसों के लिये हिमालय के पश्चिमी और मध्य भाग सबसे अधिक जोखिम में हैं। उत्तराखंड के चमोली, उत्तरकाशी, बद्रीनाथ और केदारनाथ मार्ग, हिमाचल प्रदेश के मनाली, रोहतांग पास, लाहौल-स्पीति क्षेत्र, जम्मू-कश्मीर के गुलमर्ग, द्रास, कारगिल और सियाचिन ग्लेशियर, तथा सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश के युमथांग और तवांग क्षेत्र अत्यधिक संवेदनशील हैं।

ये सभी क्षेत्र 3,000 से 6,000 मीटर की ऊंचाई पर स्थित हैं, जहां पर्यटन, तीर्थयात्रा और सीमावर्ती सड़क निर्माण लगातार जारी है। इन इलाकों में लगभग एक करोड़ लोग निवास करते हैं, जिनमें लाखों की आजीविका सीधे बर्फ से जुड़ी है। स्थानीय निवासी जैसे चरवाहे, किसान और सेब उत्पादक, बर्फ पर निर्भर हैं, लेकिन हिमस्खलन उनके खेतों और घरों को बर्बाद कर देता है। बर्फबारी पहाड़ी पर्यटन का एक आवश्यक हिस्सा है जो कि मसूरी, औली, शिमला और गुलमर्ग जैसे पर्यटन स्थलों पर लाखों प्र्यटकों को आकर्षित करता है। लेकिन अति होने पर यही बर्फबारी हादसों का कारण भी बनती है। सीमा पर तैनात सैनिकों और सीमा सड़क संगठन के मजदूरों के लिए भी यह घातक स्थिति बनती है।

सावधानी में ही सबसे बड़ा बचाव: हिमस्खलन को रोका नहीं जा सकता, लेकिन सावधानी और तैयारी से इसके प्रभाव को कम किया जा सकता है। एसएएसई और राष्ट्रीय आपदा मोचन बल की सलाह है कि पर्वतीय यात्राओं से पहले हिमस्खलन चेतावनी बुलेटिन देखें, ढलानों से दूर रहें, और सुरक्षा उपकरण जैसे लोकेशन बीकन, जांच छड़ और फावड़ा साथ रखें।

गांवों में प्रारंभिक चेतावनी प्रणाली लगाना और भारी बर्फबारी के बाद कम से कम 48 घंटे तक अनावश्यक आवाजाही से बचना आवश्यक माना जाता है। सरकार को भी सीमावर्ती सड़कों की डिजाइन को सुदृढ़ बनाना, सुरंगें और अवरोधक बनाना, तथा ग्लेशियरों की निरंतर निगरानी सुनिश्चित करनी चाहिए।

2025 में आ चुकीं एवलांच आपदाएं: सन्तोष का विषय है कि भारत में इस दिया में प्रगति हो रही है। इसी साल 28 फरबरी को चमोली के माणा एवलांच हादसे में सेना, आईटीबीपी और एनडीआरएफ ने ड्रोन, थर्मल कैमरा और हेलीकॉप्टर की मदद से 46 मजदूरों को जीवित निकाला। एसएएसई अब 50 से अधिक निगरानी केंद्रों के माध्यम से वास्तविक समय में हिमस्खलन पूर्वानुमान जारी कर रहा है। फिर भी चुनौतियां बाकी हैं। दुर्गम भूभाग, अत्यधिक ठंड और सीमित संसाधन। विशेषज्ञों का कहना है कि जलवायु-अनुकूल नीतियां और जोखिम भरे निर्माण पर रोक ही भविष्य की सुरक्षा की कुंजी हैं।